राष्ट्रीय सहारा, कानपुर 09-12-2012

प्रयोगशाला में बनेगा मांसाहार!

कुमार विजय

पिछले कुछ दशकों में वैश्विक स्तर पर मांसाहार की खपत बहुत तेजी से बढ़ी है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार सन 1961 में वैश्विक स्तर पर जहां मांसाहार की सालाना खपत सात करोड़ 10 लाख टन थी वहीं 1997-99 के दौरान यह खपत 21 करोड़ 80 लाख टन आंकी गई। यही नहीं, 2030 तक इसके 30 करोड़ 76 लाख टन होने का अनुमान है। कहने का मतलब यही है कि दुनिया की जनसंख्या जिस गति से बढ़ रही है, उसी हिसाब से मांसाहार की मांग भी बढ़ती जा रही है।

यहां पर यह भी गौर करने वाली बात है कि दुनिया में अधिक मांस की खपत विकसित देशों में होती है। यह माना गया है कि विकासशील देशों में जहां सालाना औसत रूप से एक व्यक्ति/32 किलोग्राम मांस खाता है, वहीं विकसित देशों में औसत रूप से सालाना एक व्यक्ति 80 किलोग्राम तक मांसाहार लेता है। सबसे बड़ी विडम्बना यह है कि जनसंख्या के हिसाब से मांस की खपत में बड़ा असंतुलन है। उदाहरण के लिए मौजूदा समय में मांसाहार की सबसे अधिक खपत अमेरिका में होती है जबकि यहां दुनिया की केवल पांच फीसद आबादी निवास करती है। वैश्विक स्तर पर मांसाहार के नाम पर जितने जानवरों को काटा जाता है उनमें से 15 फीसद से अधिक अकेले अमेरिका में काटे जाते हैं।

दुनिया भर में मांसाहार की बढ़ती मांग ने एक नहीं कई सवाल खड़ा कर दिये हैं क्योंकि मांसाहार की खपत पूरा करने के लिए जानवरों की संख्या बढ़ानी जरूरी है और इसका पर्यावरण पर बहुत ही प्रतिकूल असर पड़ रहा है। इनके कारण जल, जंगल और जमीन प्रभावित हो रहे हैं और अंततः इसका खमियाजा मानव जाति को भुगतना पड़ रहा है। सबसे अहम, सवाल यही है कि धरती पर रहने का इंसान का ज्यादा हक बनता है या उन जानवरों का जिन्हें बड़ी तादाद में सिर्फ मांसाहार के लिए पाला जा रहा है।

वैश्विक समाज का बहुत बड़ा तबका ऐसा है जो मीट को मुख्य आहार के रूप में तवज्जो देता है जबकि दूसरी ओर सात अरब का आंकड़ा को पार कर गई दुनिया में करोड़ों लोग ऐसे हैं जो बुनियादी जरूरतों से महरूम हैं। दुनिया का एक बड़ा तबका खाद्यान्न, पानी और बिजली जैसी बुनियादी आवश्यकता के लिए जूझ रहा है और दूसरी ओर अरबों की संख्या में मांसाहार के निमित्त जानवर पाले जा रहे हैं। इस कारण कई जगहों पर पानी की बड़ी किल्लत महसूस की जा रही है। यह भी गौरतलब है कि दुनिया में कृषि कार्य में जितना पानी का खर्च होता है, उसमें से मोटे तौर पर 23 फीसद पानी जानवरों के पालन-पोषण पर खर्च किया जाता है। अगर इसे दुनिया भर में बांट दिया जाए तो प्रत्येक व्यक्ति को 1.15 लीटर पानी उपलब्ध होगा। यही नहीं, दुनिया में भूमि का बड़ा फीसद भाग जानवरों को पालने में किया जाता है जबकि बड़ी संख्या में लोग एक अदद छत के लिए तरसते हैं। इन स्थितियों से क्या ऐसा नहीं लगता है

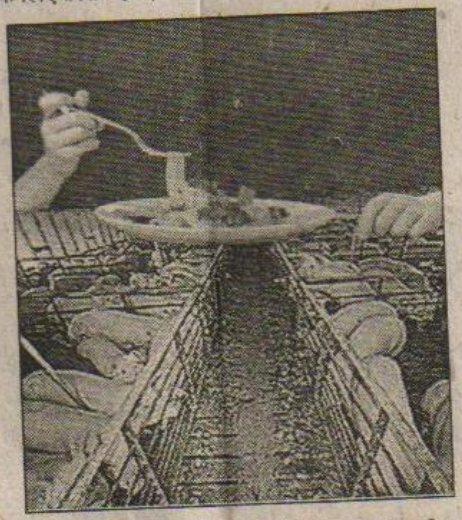

कि कुछ लोगों की मांसाहार की पूर्ति की बहुत बड़ी कीमत हमें चुकानी पड़ रही है।

जानवरों द्वारा मांसाहार प्राप्त करने की प्रक्रिया कितनी महंगी है, इसका अनुमान इससे लगाया जा सकता है कि 15 ग्राम खाने योग्य मांसाहार को प्राप्त करने के लिए हमें जानवरों को 100 ग्राम प्रोटीन युक्त वनस्पति खिलानी पड़ता है। आज दुनिया में ग्लोबल वार्मिंग का जो खतरा मंडरा रहा है उससे निबटने के विकल्प के रूप में हरे-भरे जंगलों को बहुत बड़ा माध्यम माना जा रहा है। क्योंकि हरे पेड़ों द्वारा वायुमंडल में कार्बन की मात्रा को कम किया जा सकता है। पेड़ ही एक ऐसा जरिया है जो खुद में कार्बन को समाहित कर हमें आक्सीजन देते हैं लेकिन जानवरों को पालने के लिए किस क़दर जंगलों को काटा जा रहा है, इसका अनुमान इससे लगाया जा सकता है कि आज आमेजन के सत्तर फीसद हिस्से को चारागाह बना दिया गया है जो कभी हरा-भरा जंगल हुआ करता था। दुनिया भर में जितने कार्बन का उत्सर्जन होता है उसमें 18 फीसद मीथेन में 40 फीसद और नाइट्रो आक्साइड में 65 फीसद योगदान पशुओं का होता है। इसके अलावा एक महत्वपूर्ण सवाल यह है कि पशुओं को जो एन्टीबायोटिक्स दिये जाते हैं उसका 75 फीसद हिस्सा उनके मल के साथ बाहर आ जाता है जो किसी न किसी रूप में मानव स्वास्थ्य के लिए हानिकारिक होता है।

बहरहाल इन समस्याओं से बचने के लिए शाकाहारी होना एक बेहतर विकल्प हो सकता है लेकिन बढ़ती जनसंख्या के साथ मांसाहारी लोगों की संख्या भी बढ़ती गई। इसी के विकल्प के रूप में अब प्रयोगशाला में कृत्रिम तरीके से मांसाहार तैयार किये जाने की चर्चा है। वैज्ञानिकों की मानें तो जल्दी ही लैब में तैयार सौसेज (एक प्रकार का मीट आइटम) बाजार में उपलब्ध होगा। इसे सबसे पहले नीदरलैंड के वैज्ञानिकों ने लैब में तैयार किया जिसे सोगी पोर्क का नाम दिया गया है। नीदरलैंड के मास्ट्रीकच्ट विश्वविद्यालय के बायोलॉजिस्ट्स को उम्मीद है कि बाजार में जल्द ही लैब में तैयार हैमबर्गर (मांसयुक्त) उपलब्ध होगा। विज्ञान की इस उपलब्धि से यह उम्मीद तो बंधती है कि इसके बाद दुनिया में मांसाहार के नाम पर पाले जाने वाले जानवरों की संख्या में कमी आ सकती है जो पर्यावरण के अनुकूल होगा। कारण, इससे कार्बन उत्सर्जन की मात्रा में कमी आएगी और इससे पानी की भी जरूरी बचत होगी। इसका अनुमान इससे भी लगाया जा सकता है कि इनवायरमेंटल साइंस एंड टेक्नोलॉजी जनरल के मुताबिक प्रयोगशाला में तैयार मीट में ऊर्जा की खपत प्राकृतिक मीट की तुलना में 35 से 60 फीसद तक कम होगी। दुनिया को विज्ञान ने क्रांति के नए-नए रास्ते दिखाए हैं। उसी तरह लैब में तैयार मीट आहार की दुनिया में किसी क्रांति से कम साबित नहीं होगा लेकिन सबसे बड़ा सवाल फिर भी हर किसी के मन में होगा कि प्रयोगशाला में तैयार मांसाहार प्राकृतिक रूप से पाले गये पशुओं की तुलना में कितना कारगर और सुरक्षित विकल्प होगा!